ओ३म्

सुधारक

गुरुकुल झज्जर का लोकप्रिय मासिक पत्र

वर्ष 68 अंक 8 मार्च 2021 फाल्गुन 2077 वार्षिक मूल्य 150 रु०

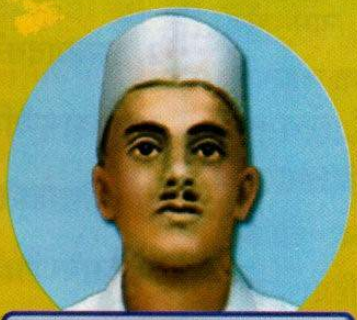

सुखदेव

राजगुरु

पं० लेखराम आर्यपथिक

शहीद भगतसिंह

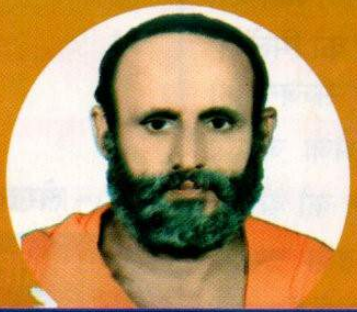

स्वामी ओमानन्द सरस्वती

संस्थापक : स्व० स्वामी ओ३मानन्द सरस्वती
प्रधान सम्पादक : आचार्य विजयपाल
सम्पादक : विरजानन्द दैवकरणि
व्यवस्थापक : ब्र० साहिल आर्य

सुधारक के नियम व सविनय निवेदन

1. सुधारक का वार्षिक शुल्क 150 रुपये है तथा आजीवन सदस्यता शुल्क 1500 रुपये है।
2. यदि सुधारक 20 तारीख तक नहीं पहुंचता है तो आप व्यवस्थापक सुधारक के नाम से पत्र डालें। पत्र मिलते ही सुधारक पुनः भेज दिया जाएगा।
3. वार्षिक शुल्क तथा आजीवन शुल्क मनीआर्डर द्वारा **'व्यवस्थापक सुधारक'** के नाम भेजें। सुधारक वी.पी. रजिस्ट्री द्वारा नहीं भेजा जाएगा।
4. लेख सम्पादक सुधारक के नाम भेजें, लेख छोटे, सरल, संक्षिप्त, सारगर्भित तथा मौलिक होने चाहिएं तथा स्पष्ट, शुद्ध एवं सुन्दर लेख में कागज के एक ओर लिखे जाने चाहिएं। अशुद्ध एवं गन्दे लेखवाला लेख नहीं छापा जाएगा। लेखों को प्रकाशित करना न करना तथा उनमें संशोधन सम्पादक के अधीन होगा। अस्वीकृत लेख डाक-व्यय प्राप्त होने पर ही वापिस भेजे जाएंगे।
5. सुधारक में विज्ञापन भी दिए जाते हैं, परन्तु विज्ञापन शुद्ध एवं वास्तविक वस्तु का ही दिया जाएगा।
6. यह सुधारक मासिक पत्र समाजसुधार की दृष्टि से निकाला जाता है। इसमें आपको धर्म, यज्ञकर्म, समाजसुधार, देश व समाज की स्थिति, ब्रह्मचर्य, योगासन आदि विषयों पर लेख पढ़ने को मिलेंगे।
7. सुधारक के दस ग्राहक बनानेवाले सज्जन को एक वर्ष तक निःशुल्क सुधारक भेजा जाएगा तथा पचास ग्राहक बनानेवाले सज्जन को दो वर्ष निःशुल्क सुधारक भेजा जाएगा तथा उसका फोटो सहित जीवन परिचय सुधारक में निकाला जाएगा।

–व्यवस्थापक

वर्ष :68 अंक : 7
मार्च 2021 विक्रमाब्द 2077
दयानन्दाब्द 196 कलिसंवत् 5121
सृष्टिसंवत्-1, 96, 08, 53, 121

विषय-सूची

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ
1.	वैदिक विनय	1
2.	सम्पादकीय	2
3.	महान् वैदिक धर्म...	4
4.	...भगतसिंह होते तो...	8
5.	अमर शहीद सुखदेव	11
6.	क्रान्तिकारी वीर...	14
7.	मन्दिर से निजामुद्दीन...	18
8.	मां की पुकार	21

नोट :- लेखक अपने लेख का स्वयं जिम्मेवार होगा।

सुधारक मासिक पत्र का वार्षिक शुल्क १५० रुपये भेजकर स्वयं ग्राहक बनें और दूसरे साथियों को भी ग्राहक बनाकर सुधार कार्य में सहयोग दीजिये।

-व्यवस्थापक सुधारक

वैदिक विनय

अहस्ता यदपदी वर्धत क्षा शचीभिर्वेद्यानाम्।
शुष्णं परि प्रदक्षिणित् विश्वायवे निशिश्नथः।।

ऋ० १०. २२, १४

विनय

हे इन्द्र! तुम सब मनुष्यों का भला करने वाले हो। जब कभी कोई महाअसुर विश्वव्यापी होकर विश्व भर को पीड़ित कर देता है तो तुम्हीं उसका संहार करके विश्व का पालन करते हो। यह मायावी 'शुष्ण असुर' हमारे रुधिर को, धन जन भोजन जीवन प्राण आदि रुधिर को, इस प्रकार शोषण करता है कि हमे इसका कुछ भी पता नहीं लगता। असली शोषण कर्म करने वाले अैर इस चूस में बड़ा भाग बटाने वाले इसके बड़े बड़े साथी असुर भी अपने आपको अन्त तक छिपाये रखते हैं रुधिर आदि की बहुत कमी हो जाने पर जब हम जानना चाहते हैं कि ये हमारा शोषण करने वाले कौन हैं तब भी ये विदित नहीं होते हैं, 'वेद्य' ही रहते हैं। इनका ही नहीं किन्तु ये 'वेद्य' असुर अपने इस राक्षसी शोषण के नृशस कृत्य को छिपाने अपनी आसुरी 'शचीओं' द्वारा, शक्तियों व कर्मों द्वारा एक बहुत बड़ा आवरण खड़ा कर लेते हैं। एक नयी पृथिवी, एक नयी सृतष्टि रचकर ही हमारी आंखों में धूल डालते रहते हैं। इन आंखों से इनकी इस कौशलपूर्ण पार्थिव रचना को देखते हुए 'वाह-वाह' करते जाते हैं और अपने आपको चुसवाते जाते हैं। परन्तु हे इन्द्र! छिपे हुवे इन शोषक असुरों का यह पार्थिव विस्तार चाहे कितना बड़ा हो, चाहे कितना आडम्बर पूर्ण हो, किन्तु न इसके हाथ होते हैं और न पैर। यह माया ही माया होता है। तुम से अनुप्राणित न होने के कारण नतो इसमें कोई कोई असली कर्मशक्ति होती है और न ही उसका कोई आधर होता है। अतः इस 'अहस्तः अपदी' मायामयी पृथिवी को तुम काफी हद तक बढ़ने भी देते हो शुष्णासुर अपने इस विश्वव्यापी शेषण की आड़ करने के लिये इसे इतना बढाता जाता है कि इस आचरण को विश्वभर में फैला देता है औरइस विश्वव्यापी आवरण द्वारा अपने आपको सब जगह परिवेष्टित कर लेता है सब तरफ से लपेट लेता है, पूरी तरह छिपा लेता है और एक विश्वव्यापी माया दुर्ग में अपने को सुरक्षित कर लेता है। पर इसके इतना बढ जाने पर भी हे इन्द्र! तुम इस 'शुष्ण 'के इन्द्र!सब पार्थिव विस्तार को एक बार में छिन्न भिन्न कर देते हो, इसी सम्पूर्ण माया को पूरी तरह मिटा देते हो यह सब हे इन्द्र! तुम सब मनुष्यों के लिये, विश्व कल्याण के लिये करते हो। और यह तुम्हारा ही काम है। यह सब तुम्हीं कर सकते हो, केवल तम्हीं कर सकते हो।

शब्दार्थ-

हे इन्द्र! (यत्) जब (वेद्यानां) वेदितव्य, छिपे हुये (शोषक असुरों) की (शचीभिः) शक्तियों से (अहस्ता) बिना हाथ वाली (अपदी) बिना पैर वाली (क्षाः) पृथिवी, पार्थिव आवरण, माया की भूमि (वर्धत) बढ़ती है तो तुम (शुष्ण) शुष्णासुर को (परि) परिवेष्ठित करके (प्रदक्षिणित्) घेरे हुए लपेटे हुये, छिपाये हुये (इस पृथिवी को) (विश्वायवे) सब मनुष्यों के हित के लिये (निशिश्नथः) पूरी तरह नष्ट कर देते हो।

सम्पादकीय

१९वें स्मृति दिवस पर प्रस्तुत महाविद्यालय गुरुकुल झज्जर (हरयाणा) के आचार्य श्री स्वामी ओमानन्द सरस्वती (आचार्य भगवान्देव) के जीवन की प्रमुख घटनायें

१ पिता-श्री चौधरी कनकसिंह जी आर्य

२ माता-श्रीमती नान्ही देवी

३ जन्म-चैत्र कृष्णा अष्टमी विक्रम संवत् (१९६७) २२ मार्च १९११ ई.

४ जन्मस्थान-मामूरपुर पाना, नरेला, दिल्ली-४०

५ शिक्षा-सैन्टस्टीफेन्स कालेज दिल्ली से एफ.ए.। शहीद भगतसिंह आदि को देश सेवा के बदले अंग्रेजों द्वारा फांसी दिये जाने के विरोध में कालेज का त्याग सन् १९२०

६ **देशसेवा का व्रत**-सन् १९३१ से भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में सम्मिलित होकर नरेला में आर्य विद्यार्थी आश्रम की स्थापना करके उस केन्द्र के द्वारा देश को स्वतन्त्र कराना, अछूतोद्धार, वैदिक धर्म त्याग कर ईसाई बने भारतीयों को शुद्ध करके पुनः वैदिक धर्म में दीक्षित करना, रात्रि पाठशालाओं के द्वारा अशिक्षितों को शिक्षित करना आदि कार्य सन् १९४१ तक।

७ सन् १९३९ में निजाम हैदराबाद द्वारा आर्यसमाज के प्रचार पर प्रतिबन्ध लगाने के विरुद्ध तुलजापुर (हैदराबाद) में सत्याग्रह करके विजयी होना।

८ सन् १९४०-४१ में आचार्य राजेन्द्रनाथ शास्त्री के पास श्रीमद्दयानन्द वेदविद्यालय दिल्ली तथा स्वामी व्रतानन्द जी के पास गुरुकुल चित्तौड़गढ़ में रहकर आर्षग्रन्थों का अध्ययन किया।

९ सन् १९४२ में दीपावली को गुरुकुल झज्जर का आचार्य पद संभाल कर आजीवन (२३ मार्च २००३ ई. तक) आचार्य पद को सुशोभित किया।

१० सन् १९५४ में नरेला में स्थित अपनी सारी पैतृक भूमि दान करके कन्या गुरुकुल नरेला की स्थापना करना।

११ सन् १९५७ में पंजाब के हिन्दी रक्षा सत्याग्रह का सफलतापूर्वक संचालन करना।

१२ सन् १९६१ में गुरुकुल झज्जर में हरयाणा प्रान्तीय पुरातत्त्व संग्रहालय की स्थापना करके प्राचीन भारत के लुप्त इतिहास की खोज द्वारा भारत के प्राचीन गौरव की रक्षा करना।

१३ सन् १९६६-६७ में गोरक्षा सत्याग्रह के द्वारा भारत में गोवध निषेध कराने के प्रयत्न करना।

१४ सन् १९६८ में हरयाणा के राज्यपाल श्री वीरेन्द्र नारायण चक्रवर्ती द्वारा संस्कृत के

राज्य पंडित की उपाधि से अलंकृत करके गौरव प्रदान करना।

१५ सन् १९६८ में कुण्डली (सोनीपत) में बन रहे पशुवध स्थल (बूचड़खाने) को समाप्त कराना।

१६ १५ अगस्त १९६९ में भारत के राष्ट्रपति श्री वराह गिरी वेंटगिरी द्वारा राष्ट्रीय पण्डित की उपाधि से विभूषित।

१७ २८ अगस्त सन् १९६९ में दिल्ली के उपराज्यपाल श्री आदित्यनाथ झा द्वारा दिल्ली के राष्ट्रीय पण्डित की उपाधि से विभूषित होना।

१८ **संन्यास दीक्षा**-श्री स्वामी सर्वानन्द जी महाराज दयानन्दमठ दीनानगर से ४ अप्रैल १९७० को संन्यास दीक्षा ग्रहण करके आचार्य भगवान्देव से स्वामी ओमानन्द सरस्वती नाम धारण करना।

१९ विदेश यात्रायें-सन्१९६८ से १९८४ तक रूस, जापान, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, अफ्रीका, ताईवान-फार्मूसा (चीन), सिंगापुर, बालीद्वीप आदि २१ देशों की यात्रा करके वैदिक धर्म का प्रचार और भारतीय इतिहास की महत्ता सिद्ध करना।

२० **साहित्य रचना**-ब्रह्मचर्य के प्रचार, समाज सुधार, कुरीति निवारण, विदेश यात्रा, आयुर्वेद और भारतीय इतिहास सम्बन्धी ६० ग्रन्थों की रचना के साथ-साथ वेद, वेदांग, उपांग, उपनिषद् आदि प्राचीन ग्रन्थों का प्रकाशन और प्रचार करना।

२१ महर्षि दयानन्द सरस्वती की निर्वाण शताब्दी अजमेर के अवसर पर सन् १९८२ में उनकी अनुपम कृति सत्यार्थप्रकाश को ४२७ ताम्रपत्रों पर उत्कीर्ण करवा कर विश्व में प्रथम बार एक अद्भुत कार्य किया। प्रत्येक पृष्ठ का भार ढाई किलो है।

२२ भारत के ३५ गुरुकुलों को आर्ष पाठ्यक्रम के द्वारा एक सूत्र में पिरोकर आर्षपाठ-विधि को पुनर्जीवित करने के लिए **श्रीमद्दयानन्द आर्ष विद्यापीठ** की स्थापना करके उसके कुलपति पद को सुशोभित करना।

२३ **सम्मानित पद**- महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित श्रीमती परोपकारिणी सभा अजमेर, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, वैदिक याति मण्डल के प्रधान पद पर स्थित रहे।

२४ अपने जीवन काल में सहस्रों छात्रों को वैदिक धर्म की शिक्षा से शिक्षित किया, जिनमें से अनेक ब्रह्मचारी, संन्यासी, महात्मा बनकर देश-विदेश में वैदिक धर्म का क्रियात्मक प्रचार करके जन-कल्याण कर रहे हैं।

२५ **स्वर्गवास**- ९३ वर्ष की आयु में २३ मार्च सन् २००३।

* जब तक यह अनार्ष शिक्षा संसार से विदा होकर इसके स्थान पर ऋषियों के विमल मस्तिष्क से निकली हुई आर्ष ज्ञान की ज्योति इस विश्व को आलोकित नहीं करती तब तक प्राणी मात्र दु:खी ही रहेगा।

-ओमानन्द सरस्वती

महान् वैदिक धर्म प्रचारक रक्तसाक्षी पं० लेखराम जी 'आर्य मुसाफिर'

-ब्र० साहिल आर्य, व्यवस्थापक 'सुधारक'

महर्षि देव दयानन्द के दर्शन असंख्य लोगों ने किए, उनके उपदेशामृत का पान करने का सौभाग्य भी लाखों लोगों को प्राप्त हुआ। उनसे प्रभावित होकर जिनकी काया पलट गई, ऐसे दयानन्द के दीवानों में पण्डित लेखराम ही अग्रणी हैं। वे ऋषि के दर्शनों व उपदेशों से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने ऋषि के प्रिय वैदिक धर्म के लिए हंसते-हंसते अपने सर्वस्व की आहुति दे दी। उन्होंने हजारों लोगों को धर्मांतरण से बचाया। वैदिक धर्म के इतिहास में वे सदा अमर रहेंगे।

जन्म-महाराजा रणजीतसिंह की सेना में 'श्रीनारायण' नामक एक वीर योद्धा थे। एक बार वे सरदार काहन सिंह के साथ पठानों के विरुद्ध लड़ने गए। लड़ाई में उनको एक गोली लगी। युद्ध में वीरता के कारण उन्हें पुरस्कार में एक जोड़ी सोने के कड़े प्राप्त हुए। इस वीर के पुत्र पं० ताराचन्द जी को सम्वत् १९१५ विक्रमी (१८५८ ई०) में शुक्रवार के दिन एक पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई, जिसका नाम लेखराम रखा गया। लेखराम की माता का नाम 'भागभरी' था। पण्डित जी का जन्म पंजाब प्रान्त के झेलम (झेहलम) जिले में सैदपुर नामक ग्राम में हुआ। वे कुल से सारस्वत ब्राह्मण थे।

बाल्यकाल व शिक्षा- पं० लेखराम जी की आरम्भिक शिक्षा ग्राम सैदपुर में हुई। छः वर्ष की आयु में उनको उर्दू पढने के लिये स्कूल भेजा गय। वे बड़े कुशाग्र बुद्धि के थे तथा कविता निर्माण में भी रुचि रखते थे। उन्हें बाल्यकाल में केवल उर्दू और फारसी की ही शिक्षा मिली, जो उनके भावी जीवन में इस्लाम मत के ग्रन्थों का अध्ययन करने में काम आई।

एक बार उनको पाठशाला में प्यास लग गई। पानी के घड़े को भ्रष्ट देखकर उन्होंने मौलवी से घर जाकर पानी पीने के लिए छुट्टी मांगी। मौलवी ने छुट्टी देने से मना कर दिया और कहा-'पानी पीना हो तो यहीं पी लो।' परन्तु इस आत्माभिमानी ने न तो गिड़गिड़ा कर पुनः छुट्टी मांगी और न भष्ट घड़े का पानी पीया। सारा दिन प्यासा रहकर ही बिता दिया।

एक बार पण्डित जी मिडल की परीक्षाएं दे रहे थे, जब इतिहास का पर्चा आया तो उसका उत्तर न देकर पण्डित जी ने उसका खण्डन शुरू कर दिया। परिणाम यह हुआ कि जहां अन्य विषयों में अच्छे अंक प्राप्त हुए, वहां इतिहास में अनुत्तीर्ण हो गए। पांच वर्ष बाद इतिहास के उसी अनुत्तीर्ण विद्यार्थी को पेशावर के हाकिमों ने इतिहास का मामला इकट्ठा करने में लगाया था।

सम्वत् १९२६ में जब लेखराम जी ११ वर्ष के थे तो उनके चाचा गण्डाराम पेशावर के एक पुलिस थाने में स्थिर स्थान पर नियुक्त हो

गए और उन्होंने लेखराम को अपने पास बुला लिया। वहां अध्यापक प्राय: मुसलमान होते थे, इसलिये लेखराम जी पर इस्लाम के संस्कार डालने का प्रयास करते थे, लेखराम जी की शंकाओं से वे इतने तंग आ जाते थे कि पढ़ाने से जवाब देकर चले जाते।

कार्यक्षेत्र में पदार्पण-पं० गंडाराम जी पुलिस विभाग में इंस्पैक्टर थे, वहां उनका प्रभाव भी अच्छा था। २१ दिसम्बर १८७५ में उन्होंने लेखराम जी को पुलिस विभाग में नक्शे (मानचित्र) बनाने के काम पर नियुक्त करा दिया। बाद में लेखराम उन्नति करके सार्जेण्ट बन गए।

जिज्ञासु प्रवृत्ति-पंडित जी के 'कृपाराम' नामक एक मित्र थे जो इस्लाम साहित्य के अनुरागी थे। उन्होंने एक बार लेखराम से पूछा- 'यदि इस्लाम में सत्यता मिल गई, तो क्या आप मुसलमान बन जाओगे।' पण्डित जी ने झट उत्तर दिया-'हां। यदि दस घड़े हों और पता करना हो कि किसका जल अधिक मीठा है, तो बिना चखे कैसे पता चले?' अत: सब मतों की पड़ताल करनी चाहिये। पण्डित जी सच्चे अर्थों में जिज्ञासु थे। शनै-शनै: उनका मन धर्म की ओर आकृष्ट होने लगा। आर्यसमाज के सम्पर्क में आने से पूर्व वे अद्वैतवाद अर्थात् जीव-ब्रह्म की एकता को मानते थे।

कायाकल्प-इन्हीं दिनों उन्हें लुधियाना के एक समाज-सुधारक पं० कन्हैयालाल अलखधारी के ग्रन्थों का अध्ययन करने का अवसर मिला। इसके कारण उनमें महर्षि दयानन्द के प्रति अत्यन्त श्रद्धा उत्पन्न हो गई। संवत् १९२० में पंडित जी विधिवत् आर्यसमाज में दीक्षित हो गए। उन्होंने अजमेर से सत्यार्थप्रकाश आदि आर्यसमाज के ग्रंथ मंगवाकर पढे। उन्होंने संवत् १९३७ में मुस्लिम बहुल नगर पेशावर में आर्यसमाज की स्थापना की तथा अनेक साथियों को आर्यसमाजी बनाया। वे सब मतों का जोरदार खण्डन करते थे, परन्तु वेदान्त विषय में उलझ जाते थे। अत: संशय मिटाने और ऋषि का आशीर्वाद लेने के लिये १८८० ई० में पुलिस विभाग से एक मास की छुट्टी लेकर अजमेर चले गये। १७ मई का सेठ फतहमल की वाटिका में पहुंच कर ऋषि दयानन्द के दर्शन किए। उन्होंने महर्षि से अनेक प्रश्न पूछे, परन्तु बाद में उनमें से केवल तीन ही याद रहे जो इस प्रकार हैं-

जीव-ब्रह्म की भिन्नता में कोई प्रमाण बतलाइये।

यजुर्वेद का सारा चालीसवां अध्याय जीव-ब्रह्म में भिन्नता बतलाता है।

अन्य मत के मनुष्यों को शुद्ध करना चहिये वे नहीं।

अवश्य शुद्ध करना चाहिये।

बिजली क्या है और यह कैसे उत्पन्न होती है?

विद्युत् सब स्थानों में है और घर्षण वा रगड़ से उत्पन्न होती है। बादलों की विद्युत् भी बादल तथा वायु के घर्षण से उत्पन्न होती है।

उन्होंने यह भी पूछा था कि आकाश भी व्यापक है और ब्रह्म भी, फिर भी दोनों एक स्थान में कैसे रह सकते हैं?

जो वस्तु जिससे सूक्ष्म होती है, वह उसमें व्यापक हो सकती है। ब्रह्म आकाश में सूक्ष्म है, अतः उसमें भी व्यापक है।

ऋषि ने उन्हें आदेश दिया कि २५ वर्ष से पूर्व विवाह न करना। महर्षि के अल्पकालीन सत्संग ने उनका वैदिक धर्म पर विश्वास चट्टान के समान दृढ बना दिया। जाते समय स्वामी जी ने स्मृति के रूप में उनको अष्टाध्यायी दी।

धर्मप्रचार की धुन-अजमेर से लौटकर उन्होंने 'धर्मोपदेश' नामक एक उर्दू पत्र का सम्पादन व प्रकाशन किया जिसके माध्यम से उन्होंने वैदिक धर्म के सत्यस्वरूप का पठित जनता में प्रचार किया।

इस बीच उनके अधिकारियों ने उन्हें परेशान करने की मन्शा से किसी अन्य थाने में स्थानांतरित कर दिया। पण्डित जी ने इस समस्या से मुक्त होने के लिये २४ जुलाई सन् १८८४ में पुलिस विभाग से त्यागपत्र दे दिया। इससे उन्हें वैदिक धर्म के लिखित व मौखिक प्रचार का पूरा समय मिल गया।

पण्डित जी धर्म रक्षा के कार्य के लिये हर क्षण तत्पर रहते थे। उनकी वाक्पटुता और विद्वत्ता का लोहा सभी विरोधी मानते थे। वे अपने तर्कों से बड़े-बड़े पादरियों और मौलवियों को निरुत्तर कर देते थे। पादरियों का उनके प्रति इतना कटु व्यवहार नहीं होता था जितना मौलवियों का। वे उनको कभी-कभी आवेश में हत्या की धमकियां भी दे दिया करते थे। इस पर हंसकर पण्डित जी कह देते-'संसार में धर्म शहीदों के खून से ही फले फूले हैं। मैं तो अपनी जान हथेली पर लिये फिरता हूं।'

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से वे मात्र २५ रुपये मासिक लेकर रात-दिन धर्मप्रचार का कार्य करते थे। बाद में उनके पुरुषार्थ को देखकर उनका वेतन ३५ रुपये मासिक कर दिया गया बिना उनके कहे।

गृहस्थ में प्रवेश-पंडित जी ने शास्त्र वर्णित रुद्रक संज्ञक ब्रह्मचारी की अवस्था पूरी करके ३६ वर्ष की आयु में सम्वत् १९५० में कुमारी लक्ष्मीदेवी से विवाह किया। संवत् १९५२ में उन्हें एक पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई जिसका नाम सुखदेव रखा गया। पण्डित जी चाहते थे कि उनकी धर्मपत्नी और पुत्र भी धर्म प्रचार करें, अतः उन्हें भी अपने साथ ले जाने लगे। उनका पुत्र यात्रा के कष्टों को सहन नहीं कर सका तथा रुग्ण होकर डेढ वर्ष की अवस्था में मृत्यु को प्राप्त हो गया। पण्डित जी ने धैर्य से इस पुत्र वियोग के महान् दुःख को सहन किया और वैदिक धर्म का निरन्तर प्रचार करते रहे।

आर्य मुसाफिर व आर्य पथिक संज्ञा-३० अक्टूबर १८८३ को ऋषि दयानन्द ने संसार को छोड़कर परमात्मा की गोद में स्थान ग्रहण कर लिया। उनके सर्वांगपूर्ण जीवन चरित लिखे जाने की आवश्यकता का अनुभव किया जाने

लगा। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने यह कार्य पं०लेखराम जी को सौंपा। उन्होंने उन सभी स्थानों जहां ऋषि दयानन्द गए थे, पर जाकर उनके जीवन की घटनाओं का अन्वेषण किया। जिन लोगों ने वार्तालापों व उपदेशों में ऋषि का साक्षात्कार किया था, उनसे मिलकर, उनके बताए वर्णनों को उन्हीं के शब्दों में लिखकर संग्रहकिया। पंडित जी द्वारा संग्रहित ही आर्यसमाज में ऋषि का सर्वोत्तम जीवन चरित है। धर्म प्रचार व ऋषि के जीवन की घटनाओं का संग्रह करने के लिये अनेक नगर ,गांवों और व्यक्तियों से मिलने के कारण उनका नाम 'आर्य मुसाफिर' वा 'आर्यपथिक' पड़ गया।

बलिदान-मोहम्मदी लोग पंडित जी से पहले ही द्वेष करते थे। उन्होंने पंडित जी पर दिल दुखाने और अश्लील लिखने के कई अभियोग दायर किए लेकन न्यायाधीशों ने पण्डित जी के लेख देखकर अभियोगों को खारिज कर दिया। इससे मुसलमान और अधिक चिढ गये। उनकी ओर से आये दिन पंडित जी को वध की धमकियां आने लगी। आर्य पुरुषों के सावधान करते रहने पर भी पंडित जी ने कभी रक्षा का प्रयत्न नहीं किया।

फरवरी १८९७ में एक काले, नाटे और गठीले बदन के मुसलमान ने अपनी शुद्धि की प्रार्थना की। धर्मवीर तो शुद्धि के लिये प्रत्येक क्षण कटिबद्ध रहते थे। उस मुसलमान की आंखों में भयंकरता बरसती थी। शुभचिन्तकों ने पंडित जी को उससे सावधान रहने को कहा। परन्तु पण्डित जी कहते-'धर्म जिज्ञासु है।' एक दिन सायं के समय उसी दुष्ट ने अंगड़ाई लेते हुए पं० लेखराम के उदर में कटारी घोंप दी। उनकी आंतें निकल कर बाहर आगई, उनमें आठ मारक घाव आया। असहनीय पीड़ा थी परन्तु उनके चेहरे पर पीड़ा का कोई चिह्न नहीं। छुरी लगने के लगभग दो घंटे पश्चात् डाक्टर पेरी साहब आये। वे हैरान थे कि इतना खून बहने के बाद भी ये जीवित कैसे हैं? निरंतर दो घंटे तक वे आंतों को सीते रहे। ११ बजे तक वे बराबर सचेत रहे। केवल परमात्मा का जप करते रहे। उन्होंने अपने साथियों को अंतिम बता कही-

'आर्यसमाज में लेख का काम बन्द नहीं होना चाहिये।'

इस प्रकार सुदि ३ संवत् १९५३ विक्रमी तदनुसार ६ मार्च १८९७ ई. को रात्रि के २ बजे उन्होंने अपने नश्वर शरीर को वैदिक धर्म पर बलिदान कर दिया।

जो कौमें अपने महान् पूर्वजों, धर्म उपदेशकों को याद नहीं करती और उन द्वारा दिखाये धर्म के मार्ग पर नहीं चलती वे कौमें दुनिया के नक्शे से मिट जाया करती हैं।

●●●

.....भगतसिंह होते तो रो देते!

भगतसिंह एक असाधारण योद्धा, एक असाधारण मनुष्य। क्या ऐसा भी हुआ है कि भगत सिंह भी भावना के उद्वेग में बहकर रोए हैं?

निःसंदेह ऐसा एक नहीं अनेक बार हुआ है। प्रायः क्रान्तिकारियों के जीवन के बारे में हमारी यह धारणा होती है कि वे बड़े कठोर और पत्थरदिल होते हैं। वे बड़े रूखे सूखे और महान् उद्देश्य की तरफ बढ़ने वाले 'निःस्पृह मनुष्य' होते हैं। भावनाओं से भला क्या लेना-देना। सचमुच, भगतसिंह थे भी संयम और त्याग की प्रतिमूर्ति। अन्तिम क्षण तक उन्होंने अपने जज्बात पर काबू भर रखा था।

उन दिनों वे लाहौर जेल में थे और असेंबली बम-कांड के लिये उन्हें काले पानी की सजा मिल चुकी थी। लाहौर षड्यन्त्र केस का फैसला होना अभी बाकी था। सभी जानते थे, फैसला क्या होगा-फांसी। एक दिन जेल में भगतसिंह की चाची हरनाम कौर मिलने आई और उन्हें देखकर अपने पर संयम न रख सकी और भला रखती भी कैसे। अपने ही हाथों से उस 'भागोंवाला' को बचपन में नहलाया खिलाया व कपड़े पहनाए थे। आज उनका वही प्यारा सा 'छौना' फांसी चढ़ जाएगा। वह फफक कर रो पड़ी। भगतसिंह एक क्षण के लिए विचलित हुए और दूसरे ही क्षण तमक कर बोले, 'चाची आप रो सकती हैं। कोई बात नहीं, लेकिन जानती हैं, मैं भी एक इन्सान हूं। मैं रो भी सकता हूं, मगर रो दिया तो जानती हैं क्या हो जाएगा?

क्रान्ति के एक 'जड़यंत्र' नहीं थे भगत..

भगतसिंह तो क्रांतिकारी से आगे बढकर 'क्रान्ति' हो गए थे। तो क्या क्रान्ति में सहृदय मानवीय अनुभूतियों का कोई स्थान नहीं होता? नहीं कई बार रोए हैं भगत सिंह। फूट-फूटकर रोए हैं, इसलिये कि वे क्रांति के एक 'जड़तंत्र' नहीं थे। वह कोमलतम मानवीय अनुभूतियों के महत्तम गायक थे। भरी अदालत में वह उस दिन फूट-फूट कर रो दिए थे, जिस दिन मुखबिर हंसराज ने सरकार की तरफ से बोलते हुए क्रान्तिकारियों के खिलाफ बयान दे डाला। बयान क्या था, सारे रहस्यों के परदे खोल दिए थे। क्रांति की एक-एक छिपी कहानी चलचित्र की तरह अदालत में पेश कर दी थी। जाहिर है कि वह बयान कई तरह के कार्यों के लिए मौत का फरमान था। भगतसिंह हंसराज को एकटक देखते रहे। पहले उनके चेहरे की मांसपेशियों पर खिंचाव आया, क्रोध और आवेश से चेहरा तमतमा उठा। फिर अचानक भावुकता में बह कर वह फफक-फफक कर रो पड़े।

तो क्या भगतसिंह अपनी मौत से डर गए थे?

जिस व्यक्ति ने खुद मौत को चुना हो, एक योजनाबद्ध तरीके से फांसी के फंदे तक पहुंचा हो, वह इतना कायर और कमजोर नहीं

था। उसकी आंखों से बहते हुए आंसुओं के प्रश्नों का उत्तर सम्पूर्ण मानवता के इतिहास में देखने को नहीं मिलेगा। उत्तर था-मुखबिर हंसराज की आंखों में। वह भी फफक कर रो पड़ा, हिचकियां बंध गई। दो आंखें रो रही थी, इसीलिए कि तेरे साथी पर कितना बर्बरतापूर्वक अत्याचार हुआ होगा। उसे कितनी यातनाएड्ड दी गई होंगी, जिससे टूटकर आज वह मुखबिर बन गया। ये बह रही आंखें भगतसिंह की थी। दो आंखें और रो रही थी, मगर वे आंसू पश्चाताप के थे-मैंने विश्वासघात किया। अपने आदरणीय साथी की नजर में पतित होने के बाद भी मैं सहानुभूति का पात्र हूँ। यह सोचने के बाद आंखें बरस पड़ी। ये आंखें हंसराज की थी।

टप-टप गिरने लगे आंसू

कैदियों को हाने वाली असुविधाओं के खिलाफ भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त ने जेल में भूख-हड़ताल आरम्भ कर दी थी। उनकी भूख हड़ताल से प्रेरित होकर कितने ही पुराने क्रांतिकारियों और सेनानियों ने भी जेल में भूख हड़ताल आरम्भ कर दी थी। उन्हीं में एक थे बाबा सोहन सिंह। वह १९१५-१६ से जेल में बन्द थे। उन्होंने भी भूख हड़ताल शुरू कर दी। जब भगतसिंह को मालूम पड़ा तब तक आठ दस दिन हो चले थे। भगतसिंह उन्हें समझाने लगे। अद्‌भुत था दो बहादुरों का मिलन। नई पीढ़ी पुरानी पीढ़ी को समझा रही थी। 'अब हम मोर्चे पर आ गए हैं। अब आप थक गए हैं, आप आराम करें।' पर बाबा जी टस से मस नहीं हुए। भगतसिंह ने कई तर्क दिए, खुशामदें की, समझाया कि आपके छूटने के दो-चार दिन शेष रहे हैं। ऐसे में भूख हड़ताल करने से आपके दिन और बढ़ा दिए जाएंगे। हम हैं तो सही। बाबा जी ने पीठ पर एक धौल मारी, 'चल बड़ा आया मुझे समझाने।'

भगतसिंह की आंखों से टप-अप आंसू गिर पड़े और तब बाबा जी उसे समझा रहे थे।

आंसू भी मेरी उद्विग्नता कम नहीं कर रहे

१५ जून, १९२९ से भगतसिंह अनशन कर रहे थे। उनके साथ यतीन्द्रनाथ दास भी अनशन में शामिल हो गए। यतीन्द्र दा की हालत पहले से नाजुक थी। वह सूखकर कांटा हो गए थे। ऊपर से 'फोर्स-फीडिंग' (बलपूर्वक खाना खिलाना) अलग किया जा रहा था। दिन-पर-दिन बीतते चले गए और वे मृत्यु के कगार पर खड़े हो गए। जब भगतसिंह उनसे मिलने पहुंचे तब उनकी वाणी अवरुद्ध हो गई थी, पर भला आंखों की भाषा कब मौन हुई है? दो हिमालय बह निकले। भगत सिंह उनसे लिपट कर रोए। इससे पहले उन्होंने एक बार बटुकेश्वर दत्त की बहन को भी आंसू से भीगा एक पत्र लिखा था, जब बटुकेश्वर दत्त को उनकी जेल से हटा कर मुल्तान जेल में भेज दिया गया था। बटुकेश्वर दत्त उनके लिए दो शरीर एक प्राण थे। उन्होंने लिखा था- 'प्रमिला, उसकी जुदाई मेरे लिए असह्य है। आज यह पहला दिन है, जब मैं अपने को उद्विग्न पा रहा हूं। आज मेरे आंसू भी मेरी उद्विग्नता कम नहीं कर रहे हैं। सचमुच, एक मित्र से जुदा होना, जो मेरे लिए सगे भाई से भी अधिक प्रिय है, बहुत दुखद है।'

तुम्हारे आंसू मुझसे सहन नहीं होत

ऐसे ही एक बार दल की बैठक के समय गंभीर चर्चा के दौरान दुर्गा भाभी की गोद में उनका चार वर्ष का बच्चा शचि भी था। शचि प्यार से भगतसिंह को 'लंबू चाचा' कहता था। कोई गंभीर मंत्रणा चल रही थी और बच्चा बार-बार संतरे की जिद कर रहा था। अब ऐसी चर्चाओं के दौर में भला उस पर कौन ध्यान देता। उलटे भाभी ने उसे दो तमाचे जड़ दिए। भगतसिंह से न रहा गया। उनकी आंखों में आंसू आ गए। उन्हें अपना बचपन याद आ गया। वह बच्चे को छाती से चिपटाए आंसू बहाते दरवाजे से बाहर निकल गए। सभी स्तब्ध रह गए। उन्होंने अपने छोटे भाई कुलतार सिंह को भी एक पत्र लिखा था। उसमें एक पंक्ति थी-'आज तुम्हारी आंखों में आंसू देखकर मुझे बहुत दु:ख हुआ। तुम्हारे आंसू मुझसे सहन नहीं होते।' कभी इसी आंसू बहाने वाले ने अपनी मां को आंसू बहाने से रोक दिया था-'मां, तुम रोई तो लोग क्या कहेंगे, भगत सिंह की मां रो रही है।'

बचपन में जब पिता जी उन्हें पीटते तो बहन अमरो के यह पूछने पर कि 'क्या बहुत चोट आई है, क्यों रोता है?' वह भोलेपन से उत्तर देते, 'अमरो, मुझे अपनी पिटाई का गम नहीं। पिता जी के हाथों में चोट लगी होगी, सोचकर रोना आ रहा है।'

कोमल साहित्य भी रुला देता था

मानवीय घटनायें ही नहीं, कोमल साहित्य तक उन्हें रुला डालता था। एक बार दल में सब क्रान्तिकारी एक ऐसे ही किसी उपन्यास के बारे में चर्चा कर रहे थे, जिसके सात पात्रों को फांसी हो जाती है। उनमें जो सबसे छोटी उम्र का था, वह अपनी संभावित मौत से डरकर रोने लगता है कि नहीं, मुझे फांसी नहीं दी जाएगी। जब उसे फांसीघर तक ले जाया जाता है तब तक उसका विश्वास रहता है कि उसे फांसी नहीं दी जाएगी। सब लोग इस प्रसंग पर हंसने लगे, मगर भगत सिंह की आंखों में आंसू थे। जिसने मौत पर विजय पा ली थी वह उसके लिये रो रहा था, जो अपनी मौत से भयभीत था।

भगतसिंह जीवन की सुंदरता से पूर्ण परिचित थे, उन्हें समाज की अन्यायपूर्ण प्रथा में रहने के बजाए मृत्यु को चुनना पड़ा। दरअसल वह एक महान् क्रांतिकारी से पहले एक महान् मनुष्य थे। मनुष्यता उनके लिए बड़ी चीज थी। मनुष्य में उनकी आत्मा सर्वोपरि थी। उनकी मनुष्यता की बात यह थी कि वह मनुष्य के रूप में उनकी आस्था सर्वोपरि थी। उनकी मनुष्यता की बात यह थी कि वह मनुष्य के रूप में उसकी खूबियों और कमजोरियों के साथ प्यार करते थे।

नकली आवरण और नैतिकता, जिससे आज हमारा समाज ग्रस्त है, वह पसन्द नहीं करते थे। तभी शायद कभी-कभी मानो वे गुनगुनाया करते थे-

'जो रखोगे याद वो निशानी हूं।
जो कहोगे न किसी से वो कहानी हूं।
सारी दुनिया से जो न थम पाया।
मैं आंखां का वही एक बूंद पानी हूं।'

२५-३-२०१८ के दैनिक भास्कर, अहा जिंदगी इंदौर से साभार

अमर शहीद सुखदेव

लेखक-आनन्ददेव शास्त्री,
पूर्व प्रवक्ता (संस्कृत दिल्ली सरकार)

सरदार भगतसिंह के साथी फांसी पर लटकाए जाने वाले, उनके अनन्यतम साथी श्री सुखदेव लायलपुर (पूर्व पंजाब) के रहने वाले थे। आपका जन्म फाल्गुन सुदी ७ सम्वत् १९६२ के दिन, दिन के ग्यारह बजे हुआ। आपके पिता का देहान्त आपके जन्म से तीन महीने पहले ही हो चुका था। इसलिये आपके लालन पालन और शिक्षा आदि का प्रबन्ध उनके चाचा अचिन्तराम ने किया था।

पांच वर्ष की आयु में आपको 'धनपतराय आर्य हाई स्कूल' में प्रविष्ट कराया गया था। अपने सातवीं कक्षा तक पढाई इसी स्कूल में की। इसके बाद आपको सनातन धर्म हाई स्कूल लायलपुर में प्रवेश दिलाया गया। सन् १९२२ में आपने इसी स्कूल से द्वितीय श्रेणी में एन्ट्रेस की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपकी बुद्धि बहुत तीव्र थी, आप किसीभी परीक्षा में कभी अनुत्तीर्ण नहीं हुए। आपका स्वभाव शान्त तथा कोमल था। तर्क करने में आपकी बुद्धि बहुत चलती थी। क्योंकि आपका जन्म एक आर्य घराने में हुआ था, अत: आप पर आर्यसमाज का बड़ा प्रभाव था। आप आर्यसमाज के प्रत्येक कार्यक्रम में अवश्य सम्मिलित होते थे।

सन् १९१९ में पंजाब के अनेक शहरों में 'मार्शल ला' लागू कर दिया गया था उस समय आपकी आयु बारह वर्ष की थी और आप सातवीं कक्षा में पढ़तै थे। आपके चाचा को भी 'मार्शल ला' में ही गिरफ्तार कर लिया गया था। बालक सुखदेव पर इस घटना का विशेष प्रभाव पड़ा। आपके चाचा अचिन्तराम बताते थे कि 'जब सुखदेव जेल में मुझ से मिलने आता था तब पूछता था कि चाचा जी क्या जेल में आपको कष्ट दिये जाते हैं ? और कहता था कि मैं जेल के किसी भी व्यक्ति को नमस्ते तक नहीं करूंगा।'

उन्हीं दिनों शहर के सभी विद्यार्थियों को इकट्ठा करके 'यूनियन जैक ब्रिटिश झंडे' का अभिवादन कराया गया था। सुखदेव जान बूझकर उस झंडा अभिवादन में सम्मिलित नहीं हुआ और जब उसके चाचा जेल से छूट कर आये तब अपने चाचा को उसने यह बात बड़े गर्व से बताई।

सन् १९२१ में महात्मा गांधी ने असहयोग आंदोलन प्रारम्भ किया तो सारे देश में जागृति उत्पन्न हो गई। उस समय आपके जीवन में भी बड़ा परिवर्तन हुआ। आपको मूल्यवान् कपड़े पहनना बहुत अच्छा लगता था, किन्तु आंदोलन प्रारम्भ होते ही आपने विदेशी कपड़ों का पूर्णरूप से त्याग दिया और खद्दर के कपड़े पहनने लगे। उसी समय हिन्दी भाषा पढ़नी प्रारम्भ कर दी और साथियों को भी हिन्दी पढ़ने के लिये प्रेरित करने लगे। आपका मानना था कि देशोन्नति के लिये हिन्दी का राष्ट्रभाषा होना आवश्यक है।

इस असहयोग आंदोलन ने सुखदेव के जीवन को ही बदल डाला। उस समय आपकी माता आपका विवाह कराना चाहती थी, किन्तु आपके चाचा विवाह के विरोध में थे। क्योंकि

वे आर्य सिद्धान्तों के अनुसार ही विवाह कराना चाहते थे। जब सुखदेव से उसकी माता कहती 'सुखदेव तुम विवाह में घोड़ी पर चढोगे?..तब सुखदेव उत्तर देता था कि माता जी! मैं तो घोड़े पर चढने की बजाय फांसी पर चढूंगा।

सन् १९२२ में जब सुखदेव ने एन्ट्रेंस की परीक्षा उत्तीर्ण की तब उसके चाचा ने जेल से आज्ञा दी कि उच्च शिक्षा पाने के लिये लाहौर जाकर डी.ए.वी. कालेज में प्रवेश ले लो। परन्तु सुखदेव ने चाचा जी की आज्ञा का पालन न करके नेशनल कालेज में प्रवेश ले लिया। आपका सरदार भगतसिंह आदि से परिचय यहीं से हुआ। आपकी मण्डली में पांच सदस्य थे और उन पांचों में परस्पर बहुत प्रेम था। महाविद्यालय के छात्र आपको पांच पाण्डव नाम से पुकारते थे।

श्री सुखदेव और उनके सहपाठियों को पर्वत यात्रा का बहुत शौक था। सन् १९२० के ग्रीष्मकाल में आप लोग कांगड़ा की यात्रा पर गये। इस यात्रा में यशपाल भी सम्मिलित हुआ था। इस पार्टी को एक दिन में वापसी के समय बयालीस मील की यात्रा करनी पड़ी।

साईमन कमीशन के आने परदइन पांचों छात्रों ने निश्चय किया कि कमीशन के विरोध में जोरदार प्रदर्शन करना चाहिये। समारोह के लिये झंडे बनाये जा रहे थे, इस समय केदारनाथ भी साथ थे। परन्तु उन्हें नींद आ गई। उधर सुखदेव भी भगतसिंह के घर सो रहे थे। भगतसिंह जब सोने लगा तो मित्रों ने उन्हें सोने नहीं दिया। उसी समय भगतसिंह के मन में विचार आया कि यदि पुलिस ने हमारे घर को घेर लिया तो सुखदेव पकड़ा जायेगा, अत: उसे सावधान करना चाहिये किन्तु तभी वहां पुलिस आ गई और सुखदेव पकड़ा गया। पुलिस ने सुखदेव से बहुत प्रश्न किये परन्तु सुखदेव ने कोई उत्तर नहीं दिया और गूंगे की तरह खड़ा रहा। आपको बाहर घंटे जेल में रक्खा गया। इसके बाद कुछ लोगों ने आकर आपको छुड़वा दिया।

श्री सुखदेव से सम्बन्धित कुछ रुचिकर वर्णन उन्हीं के क्रातिकारी साथी श्री शिव वर्मा द्वारा लिखित 'यशकी धरोहर' पुस्तक से उधृत हैं :-

श्री सुखदेव का पार्टी का नाम 'विलेजर' रक्खा हुआ था, क्योंकि वह ओढने पहनने में एकदम मनमर्जी से चलता था, जैसा या जो कपड़ा उसकी समझ में आ जाय वही पहनता था। यद्यपि वह अपने अन्य साथियों के सुन्दर तथा साफ कपड़े पहने देखना चाहता था। यदि कोई उसे रोकता या कोई उसकी पसन्द को नही मानता तो वह नाराज हो जाता था। समाज की कुरीतियों, रुढियों और राजनैतिक मतभेदों के प्रति गहरी उपेक्षा और विद्रोह का प्रतीक थी उसकी मुस्कराहट। यहां तक कि बड़ी बड़ी असफलताओं के आघात को भी वह अपनी मुस्कराहट की उपेक्षा में डुबो देता था। एक बार लाहौर बोस्टन जेल में भूख हड़ताल के सिलसिले में हम लोगों की पिटाई चल रही थ। डाक्टर हमें जबरदस्ती दूध पिलाना चाहता था, लेकिन एक-एक को काबू करने का काम था जेल अधिकारियों का। जेल का बड़ा दरोगा बारह-पन्द्रह तगड़े सिपाही और कैदी लिये एक एक को कोठरियों से अस्पताल में पहुंचाने

में व्यस्त था। उसने सुखदेव की कोठरी खुलवाई। खुलते ही सुखदेव तीर की तरह निकल भागा। दस दिन के अनशन के बाद भी उसने ऐसी दौड़ लगाई कि अधिकारी परेशान हो गये। दस दिन का भूखा आदमी भी इतना दौड़ सकता है, इस बात की उन्हें आशा नहीं थी। बड़ी कठिनाई से जब वह काबू आया तो सुखदेव ने हाथ पैर पीटने शुरू कर दिये। किसी को लात मारी, किसी को दांतों से काट लिया। इस सब बातों से दरोगा बेहद चिढ गया। डाक्टर के पास ले जाने से पहले उसने सुखदेव की खूब मरम्मत करवाई। वह मार खाता गया और दरोगा की तरफ उपेक्षा से देखता रहा। सुखदेव की शरारत भरी मुस्कराहट से दरोगा और चिढ़ गया। जब कैदी और सिपाही उसे हाथ पैर पकड़ कर अस्तपाल ले चले। सुखदेव जब पैर पीट रहा था, उसके बिल्कुल पास आकर हन्टर से धमकाते हुए दरोगा ने उस कैदी को जोकि सुखदेव के पैर पकड़े हुए था, ठीक से पैर पकड़ने का आदेश दिया। दरोगा को अपने इतने निकट देखकर सुखदेव ने जोर से झटके से एक टांग छुटवा ली और उस टांग से दरोगी की छाती में इतने जोर से लात मारी कि दरोगा दो कदम पीछे जा गिरा। देखने वालों का ख्याल था कि इसके बाद सुखद पर बेहद मार पड़ेगी, लेकिन झेंप मिटाने के लिये ठीक तरह से ले जाने का आदेश देकर वहां से चला गया। सुखदेव फिर भी नफरत भरी मुस्कान से मुस्कराता रहा।

हठी होने के साथ सुखदेव झक्की भी था। अगर उसे एक बार किसी बात की झक सवार हो गई तो किसकी मजाल, कोई उसे अपने निर्णय से डिगा सके। एक बार आगरा में उसे अपनी सहनशक्ति की परीक्षा लेने की झक आई। एक बहाना भी मिल गया। विद्यार्थी जीवन में जब क्रान्तिकारी दल से उसका सम्पर्क हुआ था, उसने अपने बांयें हाथ पर 'ओ३म्' और नाम गुदवा लिया था। फरारी की हालत में पहचान के लिये यह बड़ी निशानी थी। आगरा में बम बनाने के लिये कभी नाईट्रिक एसिड खरीद कर रक्खा गया था। किसी को बताये बगैर उसने बहुत सा एसिड ओ३म् तथा अपने नाम पर लगा दिया। शाम तक जहां जहां एसिड लगा था वहां वहां गहरे घाव हो गय और सारा हाथ सूज गया। ज्वर भी चढ गया। लेकिन इस सबके बावजूद उसने अपनी तकलीफ का किसी से जिक्र नहीं किया और न ही उफ की और न ही चूहलबाजी में कोई कमी आई। हम लोगों को उसकी कारस्तानी का पता तब चला जब दूसरे दिन नहाने के लिये उसने अपना कुर्ता उतारा। हालात देखकर जब भगतसिंह एवं आजाद नाराज हुए तो उसने हंसते-हंसते कहा कि 'शिनाख्त भी मिट जायेगी और एसिड में कितनी जलन है इसका पता भी चल जायेगा।' इसके बाद वह चार पांच दिन आगरा में रहा, करीब करीब सभी साथियों ने उसे दवा-मल्हम पट्टी आदि कराने का आग्रह किया, लेकिन उसने किसी की एक न सुनी। वह तो तकलीफ सहने की शक्ति की परीक्षा ले रहा था। वह बदस्तूर अपना सारा काम करता रहा और उसी हालत में लाहौर चला गया।

थोडे दिनों बाद एसिड का घाव भर जाने पर उसने देखा कि नाम का कुछ निशान हाथ पर अब भी शेष है। उसने उसे भी मिटाने का निश्चय कर लिया। एक दिन शाम को वह दुर्गा भाभी के यहां पहुंचा। भगवती भाई उस समय कहीं गये हुए थे और भाभी रसोई में खाना बना रही थी। सुखदेव भगवती भाई के कमरे में जाकर बैठ गया। काफी देर तक उसके चुप रहने पर दुर्गा भाभी को उत्सुकता हुई कि देखें, वह क्या कर रहा है। जाकर देख तो दंग रह गई। उसने मेज पर एक मोमबत्ती जला रखी थी और इत्मिनान से उसकी लौ पर हाथ जलाने लग रहा था। जिस स्थान पर उसका नाम लिखा था वहां की खाल जल चुकी थी। लेकिन इस बार वह काम अधूरा नहीं छोड़ना चाहता था। भाभी ने लपक कर मोमबत्ती उठा ली। जब भाभी ने उसे इस बात के लिये डाटा तो मुस्करा दिया बोला कुछ नहीं। सुखदेव इतना सहनशील तथा लगन का पक्का था।

पन्द्रह अप्रैल सन् १९१९ को श्री किशौरी लाल और प्रेमनाथ के साथ आपको भी गिरफ्तार कर लिया गया। अन्त में सात अक्टूबर उन्नीस सौ तीस को आपको फांसी सुनाई गई। तेइस मार्च सन् १९३१ को चौबीस वर्ष की आयु में आपको भगतसिंह एवं राजगुरु के साथ ही फांसी दे दी गई। रात को लाहौर जेल की पिछली दीवार तोड़कर चुपके से तीनों के शरीरों को सतलुज के किनारे मिट्टी का तेल डालकर जला दिया गया। आप तीनों का स्मारक हुसैनीवाला जिला फिरोजपुर पंजाब में स्थित है। ऐसे वीरों को शतशङ नमन।

सम्पर्क सूत्र-
१११/१९ आर्य नगर, झज्जर
मो० ९९९६२२७३७७

क्रान्तिकारी वीर शिवराम राजगुरु

लेखक-आनन्ददेव शास्त्री,
पूर्व प्रवक्ता (संस्कृत दिल्ली सरकार)

पूना के पास एक छोटा सा गाव चाकन है। जिस समय महाराष्ट्र केसरी छत्रपति श्री शिवाजी महाराज ने अपना हिन्दू राज्य स्थापित किया था, उस समय तक चाकन उस प्रान्त की राजधानी था। शिवाजी के प्रपौत्र श्री शाहू जी के राज्यकाल में चाकन के एक पंडित कचेश्वर नामक ब्राह्मण ने सारे भारत में अपने पांडित्य की धाक जमाई थी। एक बार राज्य सम्बन्धी किसी काम के लिये शाहू जी चाकन गये, वहां उनकी उपर्युक्त पंडित जी से भेंट हुई। शाहू जी पंडित जी की विद्वत्ता पर इतने मुग्ध हो गया कि उन्होंने पंडितजी को अपना गुरु मान लिया और पंडित जी को 'राजगुरु' की उपाधि से विभूषित किया। उसी समय से 'राजगुरु' इस वंश की पदवी बन गई। श्री शिवराम हरि राजगुरु इसी प्रतिष्ठित वंश के वंशधर थे।

उन्हीं पडित जी के दो पुत्र हुए, जिनमें छोटा तो सतारा में ही बस गया था और बड़ा पूना के पास 'खूड़ा' नामक ग्राम में आकर रहने लगा। यही खेड़ा 'राजगुरु शिवराम' का जन्म स्थान है। आपके पिता श्री हरि नारायण राजगुरु के दो स्त्रियां थी। हरि नारायण की

दूसरी स्त्री से दो पुत्र उत्पन्न हुए, जिनमें बड़े दिनकर हरि नारायण और छोटे शिवराज राजगुरु थे।

श्री शिवराम का जन्म१९०९ ई. में हुआ था। आप बचपन में बड़े जिद्दी थे। छः वर्ष की आयु में अपके पिताजी का देहावसान हो गया था। आपके बड़े भाई दिनकर जी उन दिनों पूना में नौकरी करते थे, इसलिये पिता जी की मृत्यु के बाद आप भी पूना में रहने लगे। श्री शिवराम की प्राथमिक शिक्षा एक मराठी पाठशाला में हुई। अपका मन पढाई की अपेक्षा खेल में अधिक लगता था। इस पर आपके भाई ने आपको धमकाकर कहा तुम खेलना छोड़कर पढने में ध्यान दो। तब आपने पाठ्य पुस्तक छोड़कर एक उपन्यास पढना प्रारम्भ कर दिया-तब भाई बोले यदि तुझे नहीं पढना तो घर से निकल जा। राजगुरु तभी घर से निकल गये उस समय उनकी जेब में केवल नौ पैसे ही थे। उन्होंने रात पूना के स्टेशन पर काटी। सवेरे उठकर अपने जन्म स्थान खेड़ा पहुंचे, किन्तु गांव के लोग मुझे पहचान न लें इसलिये सारी रात भूखे ही मन्दिर में पड़े रहे। दूसरे दिन नारायण नाम के एक दूसरे गांव पहुंचे, वहां भी रात एक कुए पर बिताई। घर से लाये नौ पैसों से खरीदकर आम खा लिये। तीसरे दिन भूख से आंतड़िया सिकुड़ गई। कुए के पास एक पक्षी का आधा खाया आम पड़ा था, उसे उठाकर गुठली सहित खा गये। उस गांव के स्कूल के अध्यापकों का उन पर दया आ गई और उन्होंनं राजगुरु को अपने पास रख लिया किन्तु राजगुरु दूसरे ही दिन उनसे बिना कुछ कहे सुने कहीं चले गये। भूख लगने पर किसी पेड़ के पत्ते खा लेते और किसी चट्टान आदि पर सो जाते। एक दिन जब वे गांव के बाहर किसी मन्दिर के पास सो रहे थे, तब गांव के कुछ आदमियों ने आपको देखा और भूत समझ कर आपको पत्थर मारने लगे। आपने उठ कर उनसे पूछा मुझे क्यों मार रहे हो, तब उन्होंने आपका पिण्ड छोड़ा। अन्त में आपने गांव वालों से खाना मांगा और गांव वालों ने उन्हें खाना दिया। खाना खाकर आगे बढे और कई दिन की यात्रा के बाद आप नासिक पहुंचे। वहां एक साधु की कृपा से एक क्षेत्र में एक समय के भोजन का प्रबन्ध हो गया और शाम के समय साधु के पास भोजन करते। एक दिन वहां पुलिस आई और आपसे पूछताछ करने लगी, तब आपने पुलिस को बताया कि मैं एक विद्यार्थी हूं, इस पर पुलिस वापिस चली गई।

नासिक से चलकर आप घूमते हुए झांसी पहुंचे परन्तु आपका मन वहां भी नहीं लगा वहां से आप बिना टिकट ही रेल में बैठकर कानपुर चले गये। कानपुर स्टेशन पर एक महाराष्ट्रीय सज्जन ने आपको भोजन कराया और अपने साथ लखनऊ ले गया। वहां से लखीमपुर खीरी होते हुए आप काशी पहुंचे। काशी में आप अहल्या घाट पर रहने लगे। कई दिन पश्चात् एक क्षेत्र में भेजन का भी प्रबन्ध हो गया। आप एक पंडित से संस्कृत पढने लगे और भाई को भी सूचना दे दी। तब भाई ने पांच रुपये आपकी पढाई के लिये भेजने प्रारम्भ कर दिये।

आपको क्षेत्र में भोजन करना पसन्द नहीं था अत: सहपाठियों के साथ भोजन बनाना प्रारम्भ किया, किन्तु गुरु जी से अनबन होने के कारण आपने पाठशाला छोड़ दी। इसके बाद आपको अखबार पढने और कुश्ती लड़ने का शौक चढा, परन्तु भोजन की समस्या फिर खड़ी हो गई और आपके आगे फिर पत्ते खाने की स्थिति पैदा हो गई। अन्त में काशी से नागपुर चले गय। सन् १९२८ में फिर कानपुर चले आये तथा आपके विचारों में परिवर्तन हो गया और आप फिर घूमते हुए पंजाब चले गये। तब आप क्रान्तिकारियों की पार्टी में सम्मिलित हो गये।

जब लाहौर में लाल लातपतराय पर एस.पी. स्काट ने लाठी चार्ज करवाया और मि. सांडर्स ने लाला जी की छाती पर लाठियां मारी, जिसके कारण लाला जी की मृत्यु हो गई तब भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद ने देश के इस अपमान का बदला लेने की योजना बनाई। तब राजगुरु ने जिद्द की कि मैं स्काट को गोली मारूंगा। भगत सिंह ने बहुत समझाया, किन्तु जब नहीं माना तब निश्चय किया गया कि स्काट को मारने भगतसिंह, चन्दशेखर आजाद और राजगुरु तीनों जायेंगे। निश्चय किया गया कि जयगोपाल जोकि बाद में सरकारी गवाह बनया, दो तीन दिन तक स्काट के कार्यालय के सामने घूमकर पता लगायेगा कि स्काट अपने कार्यालय से बाहर कब निकलता है। जब जयगोपाल स्काट को पहचानने लगा तब एक दिन ये चारों स्काट के कार्यालय के सामने पहुंचे। जब पुलिस कार्यालय से एक अंग्रेज अधिकारी निकल कर बाहर आया तब जयगोपाल ने जल्दबाजी में इशारा कर दिया कि यही स्काट है, यद्यपि वह स्काट नहीं सांडर्स था। यह ही लाला जी पर लाठी चार्ज का दोषी था। स्मरण रहे जब पुलिस अधिकारी के बाहर निकलने में देरी हो रही थी तब राजगुरु ने कहा कि लो मैं अन्दर जाकर ही स्काट को गोली मार देता हूं। आजाद के रोकने से तब राजगुरु रुका था। किन्तु जब स्काट के बदले सांडर्स बाहर आया और मोटर स्टार्ट करने लगा तब राजगुरु ने सांडर्स के सिर में गोली मार दी और सांडर्स जमीन पर लुढक गया। तब भगत सिंह ने भी सांडर्स को आठ गोली मारी। उसी समय एक अंग्रेज इनकी तरफल लपका, उस समय राजगुरु का पिस्तौल जाम हो गया तब राजगुरु ने आगे बढकर मि.फर्न्स को उठाकर पटक दिया और फर्न्स वहां से उठ न सका। जब ये तीनों अपने स्थान पर गये तब राजगुरु ने आजाद से कहा कि भगतसिंह ने आठ गोली वैसे ही खराब कर दी, सांडर्स को तो मैंने मार ही दिया था।

एक दिन क्रान्तिकारी बैठे इस बात की चर्चा कर रहे थे कि पुलिस क्रान्तिकारियों पर कैसे कैसे अत्याचार करती है। उस दिन (गुलाम-चौर) खेल में हारने के कारण राजगुरु सब का खाना बनाने लगे। तब आप खाना बनाते समय बात भी कर रहे थे। आपने एक सडासी अंगीठी में गर्म होने के लिये लगा दी। जब संडासी पूर्ण रूप से गर्म हो गई तब आपने उस संडासी को अपने शरीर से लगा दिया और तीन स्थान से उनका शरीर छम से जल

गया पहले की तरह से भोजन बनाने लगे जैसे उन्हें कुछ हुआ ही नहीं हो। साथियों ने उनके हाथ से सन्डासी छीनी और उनकी मरहम पट्टी करवाई। साथियों ने जब आपसे ऐसा करने का कारण पूछा तब आप बोले कि मैं इस बात की परीक्षा कर रहा था कि मै पकड़े जाने पर पुलिस के अत्याचारों से घबरा तो नहीं जाऊंगा। जब भगतसिंह ने असेंबली में बम फैंका तथा बम फैंकने के बाद भागने की बजाय वहीं खड़े होकर गिरफ्तारी देने और एक बढिया सा वक्तव्य देने की योजना बनाई, जिससे लोगों को क्रान्तिकारियों के उद्देश्य का पता चले। तब भी राजगुरु ने बम फैंकने की जिद्द की थी, किन्तु भगतसिंह नहीं माने और बम फैंकते समय अपने साथ राजगुरु की बजाय बटुकेश्वरदत्त को ले गये।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि भगत सिंह ने असेम्बली में बम फैंकने के लिये अपने साथ राजगुरु की बजाय बटुकेश्वरदत्त को साथ ले जाने का निश्चय किया। उस समय राजगुरु दिल्ली से बाहर गये हुये थे। दिल्ली आने पर जब उनको पता चला कि भगतसिंह उनको असेंबली में नहीं ले जायेगा, तब उनके शरीर में आग लग गई तथा राजगुरु उल्टे पैर उसी समय चन्द्रशेखर आजाद के पास झांसी पहुंचा और बोला-आजाद मैं असेंबली में बम फैंकने के लिये सर्वथा उपयुक्त हूं और रही अदालत में बयान देने की बात तो वह अंग्रेजी में देनी जरूरी नहीं है और यदि अंग्रेजी में ही बयान देना जरूरी है तो जब मैंने पूरी सिद्धान्त कौमुदी यादकर ली थी तो क्या मैं छोटा सा बयान नहीं याद कर सकता। तब आजाद ने अपना पिण्ड छुड़ाने के लिये एक चिट भगतसिंह के नाम लिख दी कि यदि तुम उचित समझते हो तो राजगुरु को साथ ले जाना। भगतसिंह ने चिट पढ़कर भी राजगुरु को वापिस लौटा दिया और राजगुरु फिर झांसी इसी काम के लिये गये, किन्तु इस बार आजाद ने राजगुरु की बातों पर ध्यान नहीं दिया।

इसके बाद राजगुरु पूना में गिरफ्तार हुए और सुखदेव के साथ उन्हें भी फांसी का पुरस्कार मिला।

अन्त में २३ मार्च १९३१ के दिन भगतसिंह, राजगुरु, सुखदेव तीनों का फांसी देने का निर्णय अदालत ने दिया। साधारणतया फांसी दिन में दी जाती है, किन्तु अंग्रेज सरकार इनसे इतनी भयभीत थी कि इनको शाम को चुपचाप फांसी दे दी गई और इनके मृत शरीरों को फांसी से उतार कर और जेल की दीवार में पीछे की तरफ से एक छोटा सा रास्ता बनाकर सतलुज नदी के किनारे, इनके शरीर पर मिट्टीको तेल डालकर जला दिया गया और इनके शरीर की भस्म को सतलुज में बहा दिया गया जिससे उनके जलाने का कोई भी निशान वहीं न रहे। इन तीनों वीरों का स्मारक हुसैनीवाला जिला फिरोजपुर में बनाया गया है। इन तीनों बलिदानी वीरों को शतशः नमन।

सम्पर्क सूत्र-
१११/१९ आर्य नगर, झज्जर
मो० ९९९६२२७३७७

मन्दिर से निजामुद्दीन मरकज तक

भूमिका

लेखक-राजवीर आर्य एम०ए०
९८११७७८५५

इस लघु पुस्तिका के लिखने के प्रति दो भाव मस्तिष्क में उत्पन्न हुए। प्रथम तो यही कि आज सारा विश्व एक कोरोना वायरस नामक बीमारी से त्राहिमाम्-त्राहिमाम् कर रहा है। उसके मूल में चीन देश की वामपंथी विचारधारा और मानवता के शत्रु तबलीगी जमात के लोग हैं। अगर चीन समय रहते सारे विश्व को चेता देता तो आज इन भयंकर हालातों से विश्व गुजर नहीं रहा होता। कहा तो यहां तक भी जा रहा है कि अपने को महाशक्ति स्थापित करने के लिये उसकी यह सोची समझी योजना है। अज अमेरिका जैसा देश जिनकी फुंकार में घास जलता था आज बुरी तरह लाचार व बेबस नजर आ रहा है। जहां तक हमारे देश का प्रश्न है इस वायरस को समस्त भारतवर्ष में एक योजनाबद्ध ढंग से दिल्ली की निजामुद्दीन मरकज से तबलीगी जमातियों द्वारा फैलाया गया है और अभी तक भी फैलाया जा रहा है। इन जमातियों और इस्लाम धर्म के मौलानाओं की विज्ञान विरुद्ध मान्यताओं का उल्लेख पाकिस्तान के जमातियों द्वारा प्रसारित विचारधारा को प्राप्त होता है कि कोरोना वायरस महिलओं की बेहयाई अर्थात् इनकी चरित्रहीनता के कारण फैला है। जन्नत के अन्दर १३० फुट लम्बी हूरें होती हैं अगर वे समुद्र के अन्दर थूक भी दें तो समुद्र का पानी शहद हो जायेगा। आज दीनी तालीम ना देकर जो आधुनिक शिक्षा दी जा रही है यह सब संकटों का कारण है। तबलीगी जमात एक बहुत बड़ा इस्लामिक संगठन है। समस्त विश्व में २० से २५ करोड़ इस जमात के सदस्य हैं। इन तबलीगी जमात और वामपंथियों की विचारधारा मानवता के प्रति एक जैसी ही है। दूसरा कारण मैं इन परिस्थितियों को बनने का मूर्तिपूजा को भी समझता हूं। हमारे सामने ही मूर्तियों को तोड़ कर मन्दिरों का ध्वंस करके उनकी जगह मस्जिदों का निर्माण १२०० वर्षों तक होता रहा। हमारे देवी देवताओं की मूर्तियां तोड़ कर मस्जिदों की पोड़ियों में लगाना, महिलाओं के साथ बलात्कार करना, बलात् इस्लाम मजहब ग्रहण करवाना आदि से हमने कुछ भी शिक्षा प्राप्त नहीं की। मेरा मानना है कि अगर इन मन्दिरों का निर्माण नहीं होता तो मरकज भी नहीं होती, इसीलिये इसका शीर्षक 'मन्दिर से मस्जिद तक' रखा गया है। इतिहास लिखने के पीछे भी यही दो भाव काम करते हैं कि पहला तो हमारे पूर्वजों द्वारा जो भूल हुई है, वह हम न दोहरायें। दूसरा उन द्वारा स्थापित किये गये आदर्शों को हम ग्रहण करें और कृतघ्नता के दोष से बचें। पुस्तक लिखे जाने तक एक करोड़ से ज्यादा कोरोना के पोजिटिव मरीज अकेले भारतवर्ष में हो चुके हैं और भी बढ सकते हैं। इसका कोई उपचार

(वैक्सीन) का निकट भविष्य में आने के आसर भी नहीं लगते। जब तक मौलाना साद साद जैसे मक्कार जफरउल इस्लाम (अध्यक्ष अल्पसंख्यक आयोग दिल्ली) और जाकिर नाईक जैसों का मानसिक प्रदूषण बरकरार रहेगा। ये वायरस ऐसे ही मानवता पर आकमण करते रहेंगे। वामपंथी, वाममार्गी, नास्तिक, गुरुडम व जर, जोरू जमीन पर और दीन पर इमान (इस्लाम) लाने वाली विचारधारा इस पृथ्वी पर रहेगी तब तक शारीरिक, मानसिक व सामाजिक शान्ति प्राप्त करना असम्भव है। ऋषि दयानन्द के इन शब्दों को सब पृथ्वी के मनुष्य पढें और अमल करें तो निश्चित सबका भला हो। आंख का अंधा और गांठ का पूरा भी ठीक हो सकता है।

"यही सज्जनों की रीति है कि अपने वा पराये दोषों को दोष और गुणों को गुण जानकर गुणों का ग्रहण और दोषों का त्याग करें। और हठियों का हठ दुराग्रह न्यून करें करावें क्योंकि पक्षपात से क्या-क्या अनर्थ जगत् में न हुए और न होते हैं। सच तो यह है कि इस अनिश्चित क्षणभंगुर जीवन में पराई हानि करके लाभ से स्वयं रिक्त रहना और अन्य को रखना मनुष्यपन से बहि: है।" - सत्यार्थप्रकाश१४ समुल्लास

यद्यपि कई हजार तबलीगी जमातियों को जेल की हवा सरकार और राज्य सरकारों द्वारा खिला दी गई हैं। पर्यटक वीजा के नियमों का उल्लंघन करने एवं अन्य कई अपराधों में उनको चार्जशीट किया गया है। इस विषय में केन्द्र सरकार कठोर सजा का प्रावधान करे तो उचित रहेगा। स्वयं के जीवन को दाव पर लगाकर अन्य को हानि पहुंचाना धर्म तो नहीं यह मजहब भी नहीं हो सकता है। इस लघु पुस्तिका के लिखने के पीछे किसी की भावनाओं को ठेस पहुंचाना नहीं बल्कि सत्य को जानन और जनाना है। सद्बुद्धि की कामना के साथ--

विनीत

राजवीर आर्य

महाराजा हर्षवर्धन संवत् ६३ विक्रमी (मई ६०६ ईसवी) में थानेसर में जिस समय गद्दी पर बैठा उस समय तक हमारे देश का नाम आर्यावर्त्त ही था। उसी के समय में यह नाम भारतवर्ष व हिन्दुस्तान हो गया। महाराजा हर्षवर्धन के राजपण्डित बाणभट्ट के अनुसार उस समय तक हमारा चक्रवर्ती राज्य ही था। इस कथन की पुष्टि चीनी यात्री ह्वेनसांग भी करता है। यद्यपि इस आर्यावर्त्त देश में महात्मा बुद्ध के समय से पूर्व ही अध:पतन शुरू हो गया था फिर भी वाममार्गी अपने पैर नहीं फैला सके थे। महात्मा बुद्ध ने स्वयं तो अच्छा काम किया लेकिन उसकी शिष्य परंपरा ने स्वार्थवश व अज्ञानता के कारण पाखण्ड व अन्धविश्वास फैलाने के अतिरिक्त और कोई समाज सुधार का कार्य उन द्वारा नहीं होना पाया जाता है। संवत् ६३ के पश्चात् परिस्थितियां तेजी से परिवर्तित हो रही थीं। भारतवर्ष में

खण्डी लोग भोली-भाली जनता को मूर्ख बनाकर भिन्न-भिन्न प्रकार के मत व संप्रदायों की स्थापना करके अपना-अपना उल्लू सीधा कर रहे थे। मन्दिरों के निर्माणार्थ राजा व अन्य धनाढ्य लोगों की अज्ञानता का लाभ उठाकर खूब दुकानदारी चमकाई जा रही थी। मूर्तियों में प्राण प्रतिष्ठा करने के कारण बहकाया जा रहा था। दिन प्रतिदिन अज्ञानता का साम्राज्य स्थापित हो रहा था। पंडितों ने विद्या पढनी-पढानी छोड़ कर इसी कार्य को अपना लिया। सोचा हल्दी लगे न फिटकरी और रंग आता है चौखा। भ्रष्टाचार, अनाचार, व्यभिचार का अड्डा यह देश बन गया। जब किसी भी देश का ब्राह्मण आलस्य-प्रमाद व अविद्या का शिकार हो जाता है तो अन्य दो वर्ण क्षत्रिय व वैश्य स्वत: पतन की तरफ चलना शुरू कर देते हैं। अपनी-अपनी ढपली और अपना-अपना राग अलापने लग जाते हैं। महाराजा हर्ष तक तो इस भारतवर्ष की स्थिति ठीक ही रही। चाहे फारसियों, यूनानियों, शकों, हूणों व यवनों ने जितने भी हमले किये वे सब असफल रहे उल्टा उनको मुंह की खानी पड़ी। लेकिन जब आस्तिकवाद व हमारा वैदिक कर्मकांड बिगड़ कर धीरे-धीरे बदलना शुरू हुआ तो हमारे राष्ट्र का आदर्श भी बदल गया। राष्ट्र टुकड़ों में बटना शुरू हो गया और गीता के वाक्य, 'नाराणां नराधिपम्' की गलत व्याख्या की जाने लगी। इतिहास सदैव करवट लेता है इसी समय सातवीं शताब्दी अर्थात् आजसे १४०० वर्ष पहले इस्लाम का उदय हुआ। अरब उपमहाद्वीप उस समय हर दृष्टि से पिछड़ा हुआ क्षेत्र था। इस महाद्वीप के समुद्री तट पर यहूदी और ईसाई मजहब के लोग रहते थे तथा अरब के भीतरी क्षेत्रों में भी कुछ आबादी थी। ये लोग कबीलों में बटे हुए थे और आपस में लड़ते रहते थे। स्त्रियों की संख्या ज्यादा थी इसलिये बहु-विवाह की प्रथा थी। इनका नैतिक स्तर काफी नीचा था। इन्हीं कबीलों में एक कुरेश कबीला था जिसके मोहम्मद नामक युवक ने इस्लाम मजहब की नींव डाली। इसका कहना था कि मुझको खुदा की वाणी सुनाई देती है और इसी को संकलित करके कुरान का नाम दे दिया। इसके साथ ही उसने कहा कि खुदा एक है और वह उसका आखिरी पैगम्बर (अवतार) है। उसका कहना था कि हम सब कुरान पर ईमान लायें और मूर्तिपूजा बन्द होनी चाहिये। इस पर वहां के लोगों ने इसका विरोध किया और उपहास उड़ाया। उस समय वहां पर दो प्रमुख नगर थे एक मक्का व दूसरा मदीना। उसे मक्का से निकाल दिया। वहां से वह सन् ६३२ में मदीना आ गये। यहां पर इन्होंने यहूदियों को इकट्ठा करके अपने नेतृत्व में युद्ध करके उन पर विजय पाई। इस प्रकार मोहम्मद से मोहम्मद साहब और प्रमुख खलीफा और इमाम बन गये। बाद में मक्का भी इनके अधिकार में आ गया और वहीं से इन्होंने अपने इस्लाम मजहब का प्रसार करना शुरू कर दिया। (क्रमश:)

मां की पुकार

-महन्त चन्द्रनाथ योगी

फरवरी २०२१ से आगे

१२ उज्ज्वल भविष्य

किसी भी देश के उत्थान को देखना हो तो वहां के नौजवानों के त्याग, साहस और बलिदान होने की इच्छा को जांच लेना चाहिये। सचमुच अगर ये तीनों चीजें उनमें दिखाई दें तो समझ रखना चाहिये वह देश दुनिया के तख्ते पर उन्नतिशील किसी भी देश से पीछे नहीं रह सकता।

अपने जिले के नौजवानों को जितनी बाबत मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी ये भी कभी इतना त्याग कर सकते हैं, इस प्रकार तल्लीनता के साथ जब लड़ाई के मैदान में उतरते देखा तो मेरे हृदय में एक विश्वास की लहर दौड़ गई। और ऐसा विश्वास हुआ कि अब हमारा देश भी बहुत दिन गुलाम नहीं रहेगा। मैं ईश्वर का कृतज्ञ हुआ कह उठा-भगवन्! दीनबन्धो! तू सर्व समर्थ है, चाहे जिसे उठा दे और चाहे जिसे गिरा दे। हम पर जरा देर से आपकी नजर पड़ी यह तो ठीक है, पर हम अब भी आपके उतने ही कृतज्ञ हैं जितने कि पहले होते। क्योंकि हमारा यह पूर्ण विश्वास है कि आप जो कुछ करते हैं तो अच्छा ही करते हैं। कदाचित् आप पहले ही राजी हो जाते तो हम आपको इतना बड़ा दानी और आपकी देन को इतनी मूल्यवान् चीज न समझते। क्योंकि दुनिया की कुछ रीत ही ऐसी है, सब चीजें जरूरत पर ही मूल्यवान् समझी जाती हैं। आज आपने हमको जो कुछ देना शुरू किया है इसकी हमें बहुत भारी जरूरत थी। आहा! अब मालूम हुआ, पुरातन मुनियों ने आपको जो सर्वज्ञ और सर्वान्तर्यामी लिखा है वह बिल्कुल ठीक है। अहा आप ऐसे न होते तो हमारी इस वक्त की भारी जरूरत को कैसे जान लेते? और हमारे देश के नौजवानों के दिलों में मातृभूमि के लिये बलिदान होने की उत्कट इच्छा कैसे भर देते?

आज एक दो दस नहीं, हजारों नौजवानों को जब मैंने ईश्वरीय प्रेरणा से पैदा हुई बलिदान की इच्छा को पूरी करते देखा तो मैं आनन्द और गौरव से फूल उठा। मेरी आंखों के सामने नवीन भारत का वह चित्र नाचने लगा, जिसकी कल्पना के सब्जबाग में घूमते हुए हमारे हजारों वीर शहीद होने के लिये अपने सिर पर कफन बांध कर मैदान में आकर डटे हैं। आइये प्रसंगानुसार यह उचित जान पड़ता है कि मैं इन्हीं वीरों में से कुछेक उन सुपूतों का जिक्र पाठकों को सुना दूं, जिनके चरित्र ने मुझे खासतौर से प्रभावित किया है। और इन्हीं से सारे भारत के जवानों की बलिदानी मनोवृत्ति का पता लग जाता है।

१-रामरत्न सहारनपुर का सुनार। इस बहादुर ने रुड़की छावनी के फौजियों में उन प्रस्तावों के इश्तिहार बांटे थे, जिनके पास करने से कांग्रेस की कार्यसमिति गैरकानूनी घोषित की गई थी और जिनमें पुलिस वालों तथा फौजियों से कुछ समझदारी से काम करने की अपील की गई थी। इस कृत्य के कारण इस नौजवान पर जो जुर्म लगाया गया था, वह ऐसा था जिस में काले पानी की सजा

तक की संभावना थी। यह वीर जब जेल में लाया गया और मैंने इसके शरीर को देखकर जब उसके साथ उस अपराध की तुलना की तो मैं कांप गया और कुछ ही देर बाद जब मुझे यह मालूम हुआ कि इसके घर पर सिर्फ इसकी अकेली जवान औरत ही है, जिसका कोई सहायक नहीं तब तो मैं मानो जमीन में गड़ गया। मैंने उसके साथ अपने त्याग की तुलना की तो मुझे लज्जा का अनुभव हुआ, अन्दर से आवाज आई भला कहां यह और कहां मैं- और मैं अपने आपको धिक्कार देने लगा छि: छि: मैं भी कुछ त्यागी हूं।

पाठक महाशय जरा कल्पना कीजिये एक तरफ तो यह संगीन जुर्म जिसके कारण यह नहीं कहा जा सकता कि उसका कब घर पर आना हो या न हो। दूसरी तरफ सब ओर से नि:सहाय अकेली मां और पत्नी जिसकी बाबत कुछ पता नहीं पीछे से क्या हो, क्या नहीं। मुझे संदेह हुआ इस लड़के के दिल भी है कि नहीं? पर कुछ ही क्षण में मेरी अन्तरात्मा ने मान लिया कि दिल तो है लेकिन साधारण लोगों जैसा नहीं, वीरों जैसा है। ऐसे लोगों का दिल किसी आन को पूरी करने के लिये अथवा किसी लक्ष्य पर पहुंचने के लिये जिधर झुक जाता है बस उधर झुक ही जाता है। फिर किसी की ताकत नहीं जो उसे उलटा फेर दे। इस वीर ने भी अपने दिल को सिर्फ एक भारत माता के चरणों में झुका दिया था जिसे न तो जेल की सख्तियां वापिस लौटा सकती थी और ना ही स्त्री का करुण विलाप ही। ये ही वो भारत माता के सपूत हैं जिनकी तरफ देखकर वह अपनी मुक्ति की कुछ आशा कर सकती है।

२-जयगोपाल। यह लड़का सरकारी स्कूल की पढ़ाई छोड़कर इस लड़ाई में कूदा था, इसलिये हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी का इसका ज्ञान कुछ अधिक नहीं कहा जा सकता। लेकिन इस की कुदरती समझ ऐसी है जो किसी भी बड़े आदमी से कम नहीं कही जा सकती। इसकी शब्द योजना और बात कहने का लहजा यदि कोई आदमी पीठ फेर कर अथवा बीच में कोई व्यवधान खड़ा करके सुने तो यह जान पड़ेगा कि कोई समझदार बड़ा आदमी बोल रहा है। इसकी विचार मुद्रा और कार्य करने की कुशलता को देखकर कोई भी बुद्धिमान् पुरुष कह देगा कि यह होनहार विरवा है। इन्हीं सब गुणों को देखकर यहां की नौजवान भारत सभा के कार्यकर्त्ताओं ने इसे सेक्रेटरी का कार्य सौंपा था। जब यह सभा गैर कानूनी जमात करार दी गई तो पुलिस ने इसके दफ्तर की तलाश में आकाश पाताल एक कर दिया था। इस चतुर नौजवान ने किस प्रकार पुलिस को झांसे देते हुए सब कागजात बचाये रक्खे थे यह एक आश्चर्यजनक रहस्य है। जेल में जोर सख्तियां सामने आई उन्हें और इसके शरीर को देखकर कोई भी आदमी यह विश्वास नहीं करेगा कि यह इस इम्तिहान में पास होगा। पर इसमें जितनी समझदारी है उतना ही साहस धैर्य और दृढ़ता भी है। कुछ ही दिन के बाद मुझे यह मालूम हो गया कि नौजवानों ने इसे सेक्रेटरी का पद देने में भूल नहीं की थी। इस प्रकार इन नाजुक शरीर शहरी लड़कों की बहादुरी को देखकर मेरे हृदय में आशा के आसार दिखाई दिये और एक आवाज जिससे

बाहर निकली ये ही वे रत्न हैं जिन पर आने वाली भारतीय सन्तान गर्व करेगी।

३-कमल कृष्ण। यह लड़का भी जयगोपाल की तरह हाई स्कूल की पढ़ाई छोड़कर उसके काम में सहायता करता हुआ उसका बायां हाथ बल्कि दाहिना हाथ बन गया था। लिखित इश्तिहार बांटना, सभा के मेम्बर बनाना, चन्दा वसूल करना, जलसों का प्रबन्ध करना, दफ्तर पर छापा मारने वाले पुलिस की गतिविधि पर नजर रखना, जब्त पुस्तकों का संचय कर उन्हें बांटना, आडम्बर और बड़ाई से दूर रहकर निर्भीकता के साथ अपना कर्त्तव्य पालन करना इसी वीर का काम था। उन दिनों नौजवान भारत सभा के जलसों तक में शामिल होने से लोग घबराते थे जिन दिनों इसका यह काम करना यह जितला रहा था कि अब हमारे नौजवानों में वतन के लिये कोई भी कठिन से कठिन मुसीबत सिर पर लेने की भारी इच्छा पैदा हो चली है, लेकिन यह भी जरूरी बात है कि ऐसे तल्लीनता के साथ काम करने वाले लोग चालाक पुलिस की नजरों से बहुत दिन बचे नहीं रह सकते। अतएव एक दिन यह मां का लाडला सुपूत भी जेल के अन्दर ठूंस दिया गया। पर किसी ने यह ठीक ही कहा है कि होनहार बिरवान के होत चिकने पात। एक बैरक में रहने वाले तमाम लड़कों से इसमें एक खास विशेषता थी और वह है नेतृत्व का गुण। मैंने एक दिन किसी लड़के से इसके बारे में कुछ पूछा तो उसने फौरन उत्तर दिया-यह हमारा लीडर है। सचमुच ही जब मैंने इसकी समझदारी, किसी भी काम के लिये नेक सलाह और फिर उस पर कायम रहने की दृढ़ता देखी तो मेरे मुंह से एक आशीर्वाद निकल पड़ा परमेश्वर, इमारे इस उगते हुए पौधे को उत्तरोत्तर समृद्ध करना, क्योंकि यही वे वृक्ष होंगे जिनकी छाया में बैठकर भारतीय भावी सन्तान सुख के सांस लेगी।

४-सांवलकान्त मुखर्जी। जिस समय दुनिया की हवा से बेखबर और लड़के ताश खेलने, पतंग उड़ाने, मछली मारने वगैरा काम में दत्तचित्त रहते थे, उस समय यह लड़का कांग्रेस दफ्तर में जाकर इस प्रकार कार्य करता जैसे कोई शादी के काम में लगा रहता है। कभी राष्ट्रीय झण्डे तैयार कराता, कभी स्वयंसेवकों की वर्दी संवारना, कभी देहात से आने वाले स्वयंसेवकों को धरने के लिये शिक्षा देता, कभी जलसों और जलूसों का ऐलान करता। मतलब यह कि कांग्रेस सम्बन्धी कोई भी काम ऐसा नहीं था जिसमें यह शामिल न पाता। क्या शहरी और क्या देहाती कांग्रेस के सभी लड़के इसका कुछ लोहा-सा मानते थे। सचमुच अपनी कार्यपटुता, विनम्रता और काम करने की सच्ची लगन के कारण यह दूसरों के दिलों में घर कर लेता थ और उसका यह गुण काशीराम हाई स्कूल के हैडमास्टर का लड़का तथा बंग प्रान्तीय होने के कारण और भी चमक उठा था। इस लम्बी और ढीली धोती वाले नंगे सिर के लड़के को जेल के अन्दर आया देखकर मैं कुछ निश्चिन्त सा हो गया। मुझे कभी-कभी जो सखियों की आशंका आ घेरती थी वह अब मिटने सी लगी। मैंने सोचा अगर यह कलम का धनी नाजुक शरीर छोकरा जेल में निर्भीकता से रह सकता है तो मुझे क्या

बिजली मारती है। पर दिल में कुछ-कुछ सन्देह बना ही रहा कि आखिर तो लड़का ही है। देखें ऊंट किस करवट बैठता है। लेकिन बाद में मुझे स्वयं लज्जित होना पड़ा। इस बहादुर ने अपने आचरण से यह साबित कर दिया कि वीर बंग भूमि के सुपूत पर ऐसी कमजोरी का सन्देह करना उसका अपमान करना है। क्योंकि ये ही तो वो फौलाद की पैनी छैनी है जो भारत माँ को जकड़ने वाली गुलामी की जंजीरों के टुकड़े-टुकड़े कर डालेगी।

५-६-मुरारीलाल-शिवचरण। उम्र ११ और १३ ससाल। कांग्रेस की वर्किंग कमेटी के वो इस्तिहारात जिन्हें रुड़की छावनी में बांटते हुए रामरत्न, हंसकुमार, गौरीलाल गिरफ्तार किये गये थे, कही से इन बालकों के हाथ लग गये। और ये भी उनकी कई एक लिखित कापी तैयार कर उन्हें बांटने के लिये वहीं जा धमके। भारत माता अपने इन दूध मुंहे बच्चों को इस तरह अंग्रेजी फौज को बरगलाने की चढाई करते देखकर पता नहीं मुस्कराई होगी या रोई होगी। पर फौरन ही गिरपफ्तार कर जब ये लाड़ले सुपूत जेल में लाये गये तब तो उसका मन जरूरी ही मैला हुआ होगा। भला कौन अपने बच्चों को यों काल के गाल में जाते देख कर दुखित न होगा। ? क्रमशः

'सुधारक' के स्वामित्व आदि का विवरण
फार्म-४ (देखो नियम ८)

1.	प्रकाशन स्थान	-	गुरुकुल झज्जर (झज्जर)
2.	प्रकाशन अवधि क्रम	-	प्रतिमास
3.	मुद्रक का नाम	-	विक्रमसिंह शास्त्री
	राष्ट्रीयता	-	भारतीय
	पता	-	आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, दयानन्दमठ, रोहतक
4.	प्रकाशक का नाम	-	आचार्य विजयपाल
	राष्ट्रीयता	-	भारतीय
	पता	-	महाविद्यालय गुरुकुल झज्जर(झज्जर)
5.	प्रधान सम्पादक का नाम	-	आचार्य विजयपाल
6.	सम्पादक का नाम	-	विरजानन्द दैवकरणि
	राष्ट्रीयता	-	दोनों भारतीय
	पता	-	महाविद्यालय गुरुकुल झज्जर(झज्जर)
7.	उन शेयर होल्डरों के नाम और पता जिनके पास कुल पूंजी के लिए एक प्रतिशत से अधिक शेयर हैं।	-	प्रकाशन आदि का सम्पूर्ण व्यय गुरुकुल झज्जर करता है अन्य कोई हिस्सेदार नहीं।

मैं आचार्य विजयपाल घोषित करता हूं कि ऊपर दिया हुआ विवरण सत्य है।

-प्रकाशक के हस्ताक्षर

आचार्य विजयपाल

हमारी विशिष्ट औषधियाँ

संजीवनी तैल

यह तैल घाव के भरने में जादू का काम करता है। भयंकर फोड़े-फुन्सी, गले-सड़े पुराने जख्मों तथा आग से जले हुए घावों की अचूक दवा है। कोई दर्द या जलन किये बिना थोड़े समय में सभी प्रकार के घावों को भरकर ठीक कर देता है। खून का बहना तो लगाते ही बन्द हो जाता है। चोट की भयंकर पीड़ा को तुरन्त शान्त कर देता है। दिनों का काम घण्टों में और घण्टों का काम मिनटों में पूरा कर देता है।

मूल्य : 100 रुपये

च्यवनप्राश

शास्त्रोक्त विधि से तैयार किया हुआ स्वादिष्ट सुमधुर और दिव्य रसायन (टॉनिक) है। इसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व बूढ़े सबके लिए अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी, जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक तथा सभी हृदयरोगों की उत्तम औषध है। स्वप्नदोष, प्रमेह, धातुक्षीणता तथा सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका निरन्तर सेवन समूल नष्ट करता है। निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है। च्यवन ऋषि इसी रसायन के सेवन से जवान होगये थे।

मूल्य : 1 किलो 300 रुपये

नेत्रज्योति सुर्मा

सुर्मे तो बाजार में पर्याप्त मात्रा में मिल जाते हैं परन्तु इतना लाभप्रद और सस्ता सुर्मा मिलना कठिन है। इसके लगाने से आंखों के सब रोग जैसे आंखों से पानी बहना, खुजली, लाली, जाला, फोला, नजर की कमजोरी आदि विकार दूर होते हैं तथा बुढ़ापे तक आंखों की रक्षा करता है। दुखती आंखों में भी इसका प्रयोग अत्यन्त लाभप्रद है।

मूल्य : 50 रुपये

बलदामृत

हृदय और उदर के रोगों में रामबाण है, इसके निरन्तर प्रयोग से फेफड़ों की निर्बलता दूर होकर पुनः बल आजाता है। पीनस (सदा रहनेवाला जुकाम और नजले) की औषधि है। वीर्यवर्धक, कासनाशक, राजयक्ष्मा, श्वास (दमा) के लिए लाभकारी है। रोग के कारण आई निर्बलता को दूर करता है तथा अत्यन्त रक्तवर्धक है।

मूल्य : 200 रुपये

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला, गुरुकुल झज्जर

गुरुकुल झज्जर के प्रमुख प्रकाशन

१.	व्याकरणमहाभाष्यम् (५ जिल्द) (प्रदीप उद्योत, विमर्शसहित)	१०५०-००
२.	अष्टाध्यायी (पाणिनि मुनि)	४०-००
३.	कारिकाप्रकाश (पं० सुदर्शनदेव)	२५-००
४.	लिङ्गानुशासनवृत्ति (पं० सुदर्शनदेव)	१५-००
५.	फिट्सूत्रप्रदीप (पं० [illegible]ुदर्शनदेव)	१०-००
६.	अष्टाध्या[illegible]् (६ भाग) "	६५०-००
७.	काव्याल[illegible]ाणि (आचार्य मेधाव्रत)	२५-००
८.	दयानन्द[illegible] (मेधाव्रत आचार्य)	१५-००
९.	दयानन्दद[illegible]ग्विजयम् (१-२ भाग) "	३५०-००
१०.	निरुक्त (हिन्दीभाष्य) (पं० चन्द्रमणि)	२५०-००
११.	योगार्यभाष्य (पं० आर्यमुनि)	२०-००
१२.	सांख्यार्यभाष्य (पं० आर्यमुनि)	८०-००
१३.	मीमांसार्यभाष्य (३ भाग)	२६०-००
१४.	महारानी सीता (स्वामी ओमानन्द)	१००-००
१५.	छान्दोग्योपनिषद्भाष्यम् (पं० शिवशंकर)	२५०-००
१६.	ओरिजनल फिलासफी ऑफ योगा	२५०-००
१७.	वैदिक गीता (स्वामी आत्मानन्द)	६०-००
१८.	मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प "	३०-००
१९.	दयानन्दप्रकाश (स्वामी सत्यानन्द)	८०-००
२०.	धर्मनिर्णय (१-४ भाग)	८०-००
२१.	वैदिकविनय (१-३ भाग)	६०-००
२२.	देशभक्तों के बलिदान	१५०-००
२३.	सत्यार्थप्रकाश (स्वामी दयानन्द)	२००-००
२४.	संस्कारविधि (स्वामी दयानन्द)	५०-००
२५.	आर्योद्देश्यरत्नमाला (स्वामी दयानन्द)	५-००
२६	व्यवहारभानु (स्वामी दयानन्द)	१५-००
२७.	स्वतन्त्रता संग्राम में आर्यसमाज का योग	४०-००
२८.	चारों वेद मूल	८८०-००
२९.	सामपदसंहिता	२५-००
३०.	सुखी जीवन (सत्यव्रत)	३०-००
३१.	महापुरुषों के संग में (सत्यव्रत)	१५-००
३२.	दैनंदिनी (सत्यव्रत)	३५-००
३३.	घर का वैद्य (वैद्य बलवन्तसिंह)१-५ भाग	१००-००
३४.	संस्कृतप्रबोध (आचार्य बलदेव)	२०-००
३५.	स्वामी ओमानन्द अभिनन्दन ग्रन्थ	१००-००
३६.	स्वामी ओमानन्द ग्रन्थमाला (४ जिल्दों में)	१२००-००
३७.	ब्रह्मचर्य के साधन (स्वामी ओमानन्द)	१००-००
३८.	प्राचीन भारत के मुद्रांक (भाग-१) "	६००-००
३९.	स्वामी ओमानन्द जीवन (वेदव्रत शास्त्री)	४००.००
४०.	रामायणार्यभाष्य (दो भाग)	३२०-००
४१.	महाभारतार्यभाष्य (दो भाग)	४५०-००
४२.	प्राचीन भारत में रामायण के मन्दिर	२००-००
४३.	नौरंगाबाद की मृन्मूर्तियां	२५०-००
४४.	अगरोहा की मृन्मूर्तियां	८००-००
४५.	प्राचीन ताम्रपत्र एवं शिलालेख	२००-००
४६.	प्राचीन भारत के मुद्रांक (भाग-२)	३००-००
४७.	छन्दःसूत्रम् (हिन्दी भाष्य सहित)	१२०-००
४८.	आर्य सत्संग पद्धति	१०-००

आर.एन.आई. द्वारा रजि. नं. 11757
पंजीकरण संख्या– P/RTK/85-B/2020-22

सुधारक लौटाने का पता :-
गुरुकुल झज्जर, जिला झज्जर (हरयाणा)-124103
E-mail : gurukuljhajjar@gmail.com

ग्राहक संख्या

श्री ____________________

स्थान ____________________

डा० ____________________

जिला ____________________

प्रकाशक आचार्य विजयपाल गुरुकुल झज्जर ने आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, दयानन्दमठ, गोहाना मार्ग, रोहतक में मुद्रक–डॉ० विक्रम सिंह शास्त्री के प्रबन्ध से छपवाया।